वागप्रवाह

जनकवि नागार्जुन विशेषांक

के प्रति द्रवित है। 'घिन तो नहीं आती' कविता में कवि कृषकों और मज़दूरों के प्रति पर्याप्त सहानुभूतिशील हो उठता है।

कुली मज़दूर हैं।
बोझा ढोते हैं, खींचते हैं ठेला।
धूल-धुआँ-भाप से पडता है साबका
थके-मांदे जहाँ-तहाँ हो जाते हैं ढेर
आपस की उनकी बनकही
सच सच बतलाओ नागवार तो नहीं लगती है
जो तो नहीं कुढता है
घिन तो नहीं है।

कवि शोषित निम्नवर्ग का हिमायती, हमदर्द ही नहीं, वरन् उनके सुख-दुख का समभागी बनना चाहता है। उनका मुँह खुलवाना चाहता है जिससे अंदर ही अंदर कष्ट और व्यथा को पीनेवाले उसकी हमदर्दी, दिलासा और साथ पाकर अपना गम हल्का कर सकें। कवि का मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण उसके जनवादी दृष्टिकोण का महत्वपूर्ण पहलू है।

नागार्जुन अपनी कविता में उन शोषक शक्तियों का विरोध करते हैं जो निम्नमध्यवर्ग की जिंदगी की दुरवस्था और फटेहाली का कारण है। उन्होंने पूँजीवाद, साम्राज्यवाद, संप्रदायवाद सभी का विरोध किया है। जिससे श्रमिक, शोषित वर्ग और किसानों को उनके श्रम का उचित मान मिल सके। 'अकाल और उसके बाद' की स्थिति का वर्णन ऐसा दिया गया है -

कई दिनों तक रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उसके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।

कवि भी आम व्यक्ति की तरह दुख, कष्ट, सब भोगता है, अनुभव करता है। अबूझ कठिनाइयों से भी जूझता है। कवि जानता है कि जो भी इस धरती से, जन-जन से जुडा रहेगा वही यथार्थ को जान सकेगा। धरा की विषमताओं में तप कर ही वह ऐसी बदली बनता है जिससे जनमन हरा हो सके। आम जनता का कवि, आम-जन का कष्ट दूर कर सके :

समझ गया हूँ
जीवन में इस धराधाम का क्या महत्व है
कैसे कहलाता कोई धरती का बेटा
आसमान में सतरंगी बादल पर चढकर
कैसे जनकवि धान रोपता।

नागार्जुन की अधिकांश कविताएँ भारतीय निम्न मध्यवर्गीय श्रमिक, किसान के जीवन को चित्रित करती हैं। उनमें साधारण, उपेक्षिता तथा असहाय जिंदगी बिताने वालों के अनेकानेक चित्र हैं।

उनकी 'मंत्र' कविता देहातों में झाड़-फूँक करके उपचार करने वाले ओझा की शली में है।

"ओ भैरो, भैरो, भैरो ओ बजरंगबली
ओ बंदूक का टोटा, पिस्तौल की नली
ओ डालर, ओ रूबल, ओ पाउंड
ओ साउंड, ओ साऊँड, ओ साउण्डे ओम, ओम, ओम"

प्रो. पांडेय ने सही टिप्पणी की हैं कि एक जनकवि के रूप में नागार्जुन खुद को जनता के प्रति जवाबदेह समझते हैं, किसी राजनीतिक दल के प्रति नहीं। इसलिए जब वे साफ ढंग से सच कहते है तो कई बार वामपंथी दलों के राजनीतिक और साहित्यिक नेताओं को भी नाराज़ करते हैं। जो लोग राजनीति और साहित्य में सुविधा के सहारे जीते हैं वे दुविधा की भाषा बोलते हैं। नागार्जुन की दृष्टि में कोई दुविधा नहीं है। यही कारण है कि खतरनाक सच साफ बोलने का वे खतरा उठाते हैं।

अपनी एक कविता, "प्रतिबद्ध हूँ" में उन्होंने दो टूक लहजे में अपनी दृष्टि को स्पष्ट किया है।

"प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ प्रतिबद्ध हूँ।
बहुजन समाज की अनुपल प्रगति के निमित्त
संकुचित 'स्व' की आपाधापी के निषेधार्थ
अविवेक भीड़ की 'भेडिया-धसान' के खिलाफ़
अंध बधिर व्यक्तियों का सही राह बतलाने के लिए
अपने आप को भी व्यामोह से बारम्बार उबारने को खातिर
प्रतिबद्ध हूँ जी हाँ, शतधा प्रतिबद्ध हूँ।"

उनकी मशहूर कविता, "आओ रानी, हम ढोएंगी पालकी" के य पंक्तियाँ देखिए :

यह तो नई-नई दिल्ली है, दिल में इसे उतार लो।
एक बार कह दूँ कलका, थोडा सी लाज उधार लो
बापू को मत छोडो, अपने पुरखों से उपहार लो
जय वरदिनी की, जय हो इस कलिकाल की
आओ रानी, हम ढोएँगे पालकी।

उनका गतिशील सक्रिय और प्रतिबद्ध सदीर्घ जीवन उनके काव्य में जीवन्त रूप से प्रतिध्वनित प्रतिबिंबित है। नागार्जुन सही अर्थों में भारतीय मिट्टी से बने आधुनिकतम कवि हैं।

धरती से जुड़ा, भारतीयता के रंग में रंगा कवि नागार्जुन ऐसी प्रतिमापुंज है जिसका आलोक अंधेरों को मिटाने का अभ्यासी है। उनका आक्रोश और तीव्र विरोध भी उन जैसा ही जुझारु है। भारतीय संवेदना और जीवनमूल्यों की दृष्टि से नागार्जुन उच्चकोटि के काव्य सृष्टा ही नहीं बल्कि महान् व्यक्तित्व भी ह। उनका साधारण जनता के साथ रागात्मक संबंध सेतु अपने देश की समग्र जनता के साथ जोड़ता है। उनका साहित्य जीवन और जगत् की वास्तविकता का एक विशिष्ट प्रतिफलन है। वास्तविक संसार का प्रतिबिंब भी है और आलोचना भी। यथार्थ का दर्पण भी है और प्रगति की मशाल भी। सामाजिक प्रभाव और परिवर्तन का एक ऐसा हथियार है जिसकी शक्ति और प्रहार संजीवनी का काम करती है। भाव, अनुभूति, संवेदना, व्यंग्यात्मकता के विविध रूपों का मानवीय स्वर नागार्जुन की कविता में कलात्मकता के मणिकंचन संयोग के साथ भास्वरित है। उनकी कविताओं के विविध आयाम ऐसे स्तंभ हैं जिसका सम्मिलित प्रकाश एक अजर, अमर ज्योतिपुंज के रूप में मार्गदर्शन करता रहेगा।

संपर्क- एसोसियेट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
विनाशिलिंगम विश्वविद्यालय, कोयम्बत्तूर

ISSN : 0975-5403

जनवादी कवि : नागार्जुन

डॉ0 शशिप्रभा जैन

नागार्जुन आधुनिक युग की नव-चेतना के कवि हैं। उन्होंने एक ओर तो वर्ग संघर्ष से संत्रस्त मानवों के प्रति गहन संवेदना व्यक्त करते हुए इसके लिए उत्तरदायी व्यवस्था के विरुद्ध तीव्र आक्रोश प्रकट किया है और दूसरी ओर स्वतन्त्रता-प्राप्ति के उपरान्त भी बहुसंख्यक जनता को अभावों, कष्टों एवं पीड़ाओं में लीन देखकर स्वदेशी शासकों के अनुचित कार्यों के प्रति प्रखर एवं प्रकृष्ट व्यंग्य-वाणों की बौछार की है।

नागार्जुन ने वैसे तो प्रकृति-सुन्दरी की भी अत्यन्त मनोरम झाँकियाँ अंकित की हैं, प्रणय सम्बन्धी गीतों में भी अद्भुत मादकता की सृष्टि की है और स्वदेश प्रेम एवं राष्ट्रीयता के भावों से परिपूर्ण कविताओं का भी अत्यन्त मनोयोग के साथ सृजन किया है, परन्तु उनका सर्वाधिक झुकाव उस जन-जीवन की ओर रहा है, जो अभावों एवं विषमताओं की चक्की में पिस रहा है, जो शोषण का शिकार बना हुआ है, जो पूँजीवादी दैत्यों के चंगुल में फंसा हुआ कराह रहा है, जो साम्राज्यवादी बुलडोज़रों के द्वारा धराशायी किया जा रहा है, जो भ्रष्ट एवं व्यभिचारी नेताओं की वासना-तृप्ति का साधन बन रहा है, जो धर्म और संस्कृति की चकाचौंध से अंधा बन गया है और जिसे पग-पग पर ठुकराया जा रहा है।

इसलिए नागार्जुन का सच्चा कवि विद्रोह कर उठा है, उसने क्रान्ति का शंख फूंक दिया है और वह सिंहनाद करता हुआ कभी आर्थिक वैशम्य उत्पन्न करने वाले शोषकों को फटकारता है, कभी अन्यायी एवं अत्याचारी साम्राज्यवादियों को डाँटता है, कभी श्रमिकों को पीडा देनेवाले पूँजीवादियों को ललकारता है, कभी सत्ताधारियों की अव्यवस्थाओं पर व्यंग्य करता है और कभी देश के नेताओं के काले कारनामों का भंडाफोड करता है।

इतना ही नहीं, वह राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय राजनीति तथा सामाजिक समस्याओं पर भी सतर्क दृष्टि रखता है, पतिद्वदियों के दोषों का उद्घाटन करता है, धार्मिक रूढ़ियों एवं सामाजिक अव्यवस्थाओं के विरुद्ध आवाज उठाता है और मानवता के प्रति गहन संवेदना व्यक्त करता है।

नागार्जुन का प्रगतिशील स्वर अति तीव्र, उच्च तथा मानवीय आग्रह से भरपूर है। इसलिए उनका जनवादी स्वर भी उतना ही सशक्त, आक्रोशपूर्ण तथा क्रान्तिकारी है। नागार्जुन का यह मानववाद एक तरफ वैज्ञानिक चिंतन की ओर अभिमुख है और दूसरी तरफ समाज के अंतर्विरोधों के खिलाफ एक सजग रचनाकार की तीव्र प्रतिक्रिया से सम्बन्ध है। नागार्जुन की इस चेतना का आधार किसान आंदोलन में उनकी भागीदारी के बीच निर्मित हुआ है। उनका यह प्रगतिशील जनवादी स्वर युगीन विषमताओं और विकृतियों के प्रति न केवल ललकार भरा है वरन् जीवन के प्रत्येक स्तर पर बदलाव चाहता है। जिससे समता, समानता और समदर्शन की दृष्टि स्थापित हो।

स्वातंत्र्योत्तर प्रगतिशील काव्य में अभावग्रस्त जन-जीवन का चित्रण विविध रूपी है। कहीं अभावग्रस्त जन-समाज के संवेदनात्मक चित्र हैं तो कहीं अभावपूर्ति की आकांक्षा का प्रकाशन। नागार्जुन के काव्य में न केवल संवेदना-प्रकाशन है अधिक अभावपूर्ति के तीव्र आकांक्षा अभिव्यक्त है। अभावपूर्ति की आकांक्षा वस्तुतः अपरोक्ष रूप से अभावग्रस्त जन-समाज के प्रति गहरी सहानुभूति तथा आत्मीयता का द्योतक है।

सामाजिक यथार्थ

कवि ने अपने युग में उत्पन्न सभी हलचलों, समस्याओं एवं परिस्थितियों का अध्ययन बड़ी गहनता एवं तीव्रता के साथ किया है। वह जानता है कि किस तरह भारत का दलित वर्ग अभावों की चक्की में पिस रहा है, किस तरह भारत का किसान विविध प्रकार की कठिनाइयों से जूझ रहा है, किस तरह यहाँ का मज़दूर शोषण का शिकार बन रहा है, किस तरह मध्यवर्ग विविध समस्याओं में उलझकर व्यग्र एवं बेचैन बना रहता है, किस तरह निम्नवर्ग श्रमरत होकर भी भरपेट भोजन प्राप्त नहीं कर पाता और पग-पग पर ठुकराया जाता है एवं किस तरह उच्च वर्ग वैभव एवं विलास के पालने में झूलता हुआ ऐशो-आराम का जीवन बिता रहा है, दूसरों की कमाई खा रहा है, कम काम और अधिक आराम में लीन है और जनता की पीड़ा, कष्ट एवं व्यथा देने में ही आनन्द का अनुभव करता है। इस प्रकार वैयक्तिक अभावों एवं सामाजिक कष्टों से पीडित एवं संत्रस्त जन-जीवन कवि के हृदय को बेचैन कर देता है। वह देखता है कि आज किस तरह मुखौटा लगाकर लोग जनता के साथ व्यवहार कर रहे हैं, तो वह पुकार उठता है -

जमींदार है, साहूकार हैं, बनिया हैं, व्यापारी हैं
अन्दर-अन्दर विकट कसाई बाहर खद्दरधारी हैं।
सब घुस आये भरा पडा है, भारतमाता का मन्दिर
एक बार जो फिसले अगुआ फिसल रहे हैं फिर फिर फिर।

नागार्जुन की कविता का यह स्वर शोषितों और उपेक्षितों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण होने के साथ-साथ निर्माणोन्मुख भी है। क्रान्ति और संघर्ष के स्वरों के साथ उसने एक आधारभूमि भी प्रस्तुत की है। उसका स्वर शोषण का अन्त तथा सम्पूण-सुख की स्थापना के लिए गूँजता है। क्रान्ति का वह स्वर जो पूर्ण परिवर्तन का आकांक्षी है, सृजन और निर्माण पक्ष पर जोर देने लगता है जिससे सुख-संपन्नता हो सके। कवि का जनवादी स्वर जन-संस्कृति की स्थापना चाहता है, इसलिए अपने स्वातंत्र्योत्तर काल में वह नवमूल्यों पर आधारित नवनिर्माण की प्रेरणा देता है। उसके विचार में निर्माणोन्मुख दृष्टिकोण द्वारा शोषण का अंत किया जा सकता है :

जन जर्जन है भूख-प्यास से।
व्यक्ति-व्यक्ति दुख दैन्य-ग्रस्त है
दुविधा में समुदायपरस्त है।
लो मशाल, अब घर-घर को आलोकित कर दो।

यह भी सच है कि जितनी यथार्थता और हमदर्मी नागार्जुन ने संतप्त, उपेक्षित तथा मर्दित जन समुदाय के प्रति दर्शायी है, अन्य समकालीन कवियों में कम है। स्वयं संघर्षो में पलने के कारण नागार्जुन का मन पर्याप्त मानवीय और करुणामय हो गया है। 'सच न बोलना' और 'रामराज्य' ऐसी ही कविताएँ हैं जिनमें कवि पूँजिपतियों के दारुण अत्याचार से पिसती जनता